गांधी स्मारक निधि का मासिक मुखपत्र

संस्थाकुल

वार्षिक सहयोग राशि	:	रु. 20.00
एक प्रति	:	रु. 2.00
कुल पृष्ठ	:	12

फरवरी, 2024 वर्ष – 54 अंक – 11

रामायण और तुलसी के राम

आचार्य विनोबा

राम ते अधिक राम कर दासा

इस दुनिया में राम का यश भक्त–शिरोमणि और सब कवियों के मुकुटमणि महर्षि वाल्मीकि ने फैलाया। अगर वाल्मीकि नहीं होते, तो जगत्–उद्धारिणी राम–कथा हम भक्तों को मिलती नहीं। गंगा तो हिंदुस्तान के कुछ हिस्सों में बहती है, लेकिन रामायण की कथा सारे भारत वर्ष में बहती है। वाल्मीकि तो राम से भी बढ़ गये। यदि राम नहीं होते, तो वाल्मीकि न होते; पर यदि वाल्मीकि न होते तो राम का यश हम भक्तों के पास नहीं पहुंचता। हमारे लिए तो वाल्मीकि राम से भी बढ़कर उपकार करनेवाले हुए।

तुलसीदासजी की महत्ता

तुलसीदासजी, जो वाल्मीकि के भक्त थे, वाल्मीकि से भी आगे बढ़ गये। उन्होंने रामकथा पहुंचायी – मेहतर की झोपड़ी में ! तुलना करना अच्छा नहीं है। जहां एक ही सुवर्ण के सब अलंकार हों, वहां उन अलंकारों में फरक करना मोह मात्र होगा। फिर भी समझने के लिए शब्द बोले जाते हैं, उपमाएं भी समझने के लिए मुनष्य देता है। मेरा खयाल है कि इस उत्तर प्रदेश में, जनहितकारी तुलसीदासजी सबसे महान हो गये।

रामायण की सार्वभौम उपासना

राम–कथा समग्र भारत को पावन करती है। उधर मलवार के एक कोने में एक शूद्र जाति का भक्त मिला – राम–कथा के प्रचार के लिए। **एलुत्तच्छन्** नाम है, उस महाकवि का, जिन्होंने मलयालम् में रामायण लिखी है। तमिल भाषा में साहित्य की दृष्टि से जो किताब सबसे श्रेष्ठ मानी जाती है, वह कंबन की रामायण है। गुजरात में गिरधर की रामायण लोक–प्रसिद्ध है। बंगाल में कृत्तिदास ने रामकथा गायी है। महाराष्ट्र में एकनाथ महाराज हो गये, अत्यंत दयालु, नवनीत के समान उनका हृदय था। उन्होंने मुख्य ग्रंथ तो भागवत लिखा, लेकिन रामायण भी लिखी।

एकनाथ महाराज और तुलसीदासजी समकालीन थे। एकनाथ के भागवत और तुलसीदासजी की रामायण इन दोनों में विशेष विचार–साम्य है। एकनाथ ने भी रामायण लिखी है, पर उनकी आत्मा भागवत में उतरी है। एकनाथ कृष्ण–भक्त थे, तो तुलसीदास राम–भक्त। एकनाथ ने कृष्ण–भक्ति की मस्ती को पचा लिया, यह उनकी विशेषता है। तुलसीदासजी एकनाथ महाराज से एक साल बड़े थे। दोनों एक ही समय काशी में रहे थे। दोनों ने अपने महान ग्रंथों का लेखन काशी में रहकर ही पूरा किया था। नाथ महाराज ने विवेचन के लिए भागवत का विचारपरक विभाग चुना और उसे किसी कथा के समान सुबोध बना दिया। तुलसीदासजी ने रामचरित का कथानक काव्यशैली में लिखा और उसमें, इस सिरे से उस सिरे तक आध्यात्मिक विचार गूंथ डाले। नाथ महाराज के भागवत–विवेचन की योग्यता का विवेचन अन्य किसी भाषा में मिलता नहीं। रामकथा के विषय में तुलसी–रामायण को भी ऐसा ही अद्वितीय स्थान प्राप्त है। कंबन, एलुत्तच्छन्,

22 फरवरी
माता कस्तूरबा की पुण्यतिथि
शत्–शत् नमन् !

कृत्तिवास, श्रीधर, गिरधर आदि अनेकों ने अपनी–अपनी भाषाओं में रामायण लिखी है। वे सब उन–उन भाषाओं में उत्तम ही हैं और लोगों में प्रिय भी हैं। कंबन की रामायण तो तमिल में काव्यशैली में शेक्सपीयर की योग्यता रखती है। फिर भी तुलसी–रामायण की योग्यता उसे प्राप्त नहीं हुई। क्योंकि कंबन एक महाकवि थे और तुलसीदास एक महापुरुष थे।

तुलसी–रामायण का वाल्मीकि–रामायण की अपेक्षा अध्यात्म–रामायण से अधिक संबंध है। अधिकांश वर्णनों पर, खासकर भक्ति के उद्‌गारों पर भागवत की छाप पड़ी हुई है, गीता की छाप तो है ही।

तुलसीदासजी का अद्वितीय यश

ये सारे भक्त हो गये। वे कवि भी थे, लेकिन जो यश भगवान ने तुलसीदासजी को दिया, वह एक अद्वितीय यश था। **भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो जो, बाम रे** (वि 14)। सबके काम की चीज तुलसीदासजी ने दी, जिसके आधार से सज्जन आत्मानंद पाते हैं, जिसके आधार से दीन–हीन–पतित आश्वासन पाते हैं, जिसके आधार से थका–मांदा किसान अनंत चिंताओं के बावजूद रात को गहरी नींद सो सकता है, जिसके आधार से आप देखेंगे कि युनिवर्सिटियां चलनेवाली हैं, और आप यह भी देखेंगे कि जिसके आधार से राष्ट्रभाषा का प्रेम भारत में फैलेगा और भारत एक–जी बन जायेगा।

नाम महिमा

इतना सब तुलसीदासजी कैसे कर सके ? इतने ऊंचे वे कैसे हुए ? क्योंकि वे अपने को सबसे नीचा मानते थे। भगवान ने पापियों का उद्धार किया, इसके कुछ उदाहरण, जो सबको मालूम है, तुलसीदासजी ने पेश किये, और वे कहते हैं कि "दुनिया में ये जो प्रसिद्ध पापी गिने जाते हैं, वे भी ऐसे हैं जिनके पास कुछ पुण्य भी था और कुछ पाप भी। इस तरह जिनके पास सुकृत और दुष्कृत, दोनों बातें थीं, उनका उद्धार हुआ तो उसमें कौन–सा आश्चर्य है ? लेकिन रामनाम की सबसे बड़ी महिमा यह है कि जो 'प्रकट पातकरूप तुलसी' है, उसका भी उद्धार हुआ।"

नम्रता की सीमा

गणिका, अजामिल तथा पांच–दस नाम और लो। वे सब तुलसीदासजी की निगाह में उतने पापी नहीं थे, जितना वे अपने को पापी समझते थे। वे अपने को सबसे नीच समझते थे। गीता में ज्ञान के लक्षण बताये हैं। उनमें पहला लक्षण बताया है, 'अमानित्वम्।' आप देखेंगे कि तुलसीदासजी की वाणी में अहंता का लेश भी नहीं है। उनके मन में ही वह नहीं था, तो वाणी में कहां से आयेगा ? हम जरा कुछ अच्छा काम कर लेते हैं – जो कि सहज परिस्थितिवश हमसे हो जाता है – तो उसके लिए कितना अभिमान हमारे मन में होता है। जबकि कई पाप हम कर लेते हैं, और उनको हम छिपाते रहते हैं। खैर, छिपायें; लेकिन रामजी से वे कैसे छिपा सकते हैं ?

स्वांतःसुख में विश्व–सुख की साधना

तुलसीदासजी ने रामायण में कहा है – **स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथा भाषानिबंधमतिमंजुलमातनोति** (बाल श्लो 7) – 'अपने सुख के लिए' अति मनोहर रघुनाथ चरित्र का हिंदी भाषा में रूपांतरण कर रहा हूं। उनकी किताब ने दुनिया में क्या चमत्कार किया, वह हम आज देखते हैं। लेकिन वे मानते थे कि यह तो मैं आत्म–समाधान के लिए लिख रहा हूं।

लेकिन ऐसे 'स्वांतःसुख' के लिए रचित रामायण करोड़ों लोगों को सुख दे रही है, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। स्वांतःसुख के लिए जो किया जाता है, उसमें सच्ची तीव्रता और सच्ची छटपटाहट होती है। इसलिए वह विश्व की अंतरात्मा के साथ सहज ही जुड़ जाता है।

कोई भी पूछ सकता है कि क्या उन्हें ऐसा आभास नहीं हुआ होगा कि उनकी पुस्तक लोकोद्धारक सिद्ध होगी ? क्या रामायण लिखते समय लोकस्थिति का चित्र उनके ध्यान में नहीं रहा होगा ? और क्या उन्होंने उसकी उपाय–योजना भी नहीं सोची होगी ? क्या केवल आत्म–समाधान के लिए ही उन्होंने रामायण लिखी होगी ? इस तरह मनुष्य पूछ सकता है। लेकिन तुलसीदासजी के सामने ये सवाल नहीं टिकेंगे। इसलिए कि वे अपने को दुनिया से भिन्न और दुनिया को अपने से भिन्न समझते ही नहीं थे। उनके आत्म–समाधान में सारे विश्व का समाधान निहित था। जब वे कहते हैं कि मेरे जैसा "प्रकट–पातक सम" तर गया तो क्या हम यह समझें कि वे अपने निज के लिए, उनकी अपनी इस देह के लिए यह सब कह रहे हैं। नहीं, वे समाज के अत्यंत पापी और

पतित का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। जैसे गांधीजी ने आमरण दरिद्रनारायण का प्रतिनिधित्व किया, वैसे तुलसीदासजी ने सबसे अधिक पापियों का प्रतिनिधित्व किया। उनके साथ वे एकरूप हो गये। उनके पाप उन्होंने अपने निज के पाप महसूस किये। इसलिए उनके स्वांतःसुख में सारे विश्व का सुख समा गया।

तुलसी, पतितों के प्रतिनिधि

महात्मा गांधी का दिल गरीबों के साथ अत्यंत एकरूप हो गया था। वे अपने को दरिद्रनारायण के प्रतिनधि मानते थे और थे भी। दरिद्रों की, दुःखियों की बात उनके हृदय में उठती थी। उसी तरह तुलसीदासजी पतितों के प्रतिनिधि थे, सिर्फ दरिद्रों के नहीं। पापियों में शिरोमणि मैं हूं – इस तरह अपने को वे पतितों के प्रतिनिधि मानते थे। कलियुग का वर्णन उन्होंने किया – **जे जनमे कलिकाल कराला। करतब बायस बेष मराला** (बाल 12) – जो कराल कलियुग में, विषम कलियुग में जनमे हैं, जिनके आचरण तो कौवे के समान हैं और भेष हैं हंस के समान। **चलत कुपथ बेद मग छाँड़े** – बेद के सन्मार्ग को छोड़कर कुपथ पर चल रहे हैं, कुमार्ग पर चल रहे हैं। **कपट कलेवर कलि मल भाँड़े** – कपट की मूर्ति हैं, कलेवर कलिमल से भरे हुए हैं। **बंचक भगत कहाइ राम के** – वे राम के भगत कहलाते हैं – नाहक, मिथ्या। **किंकर कंचन कोह काम के** – कंचन के, कोह के यानी क्रोध के और मोह के दास हैं। यह सारा वर्णन कलियुग के पतितों का, पापी पामर जीवों का है। और बाद में क्या लिखते हैं, **तिन्ह महँ प्रथम रेख जग मोरी** (बाल 12) – ऐसे लोगों में मेरा नाम पहला है। बाकी के नाम पीछे। कलियुग के दांभिकों का वर्णन हम भी करते हैं लेकिन हम कहते हैं, "तुम दोषी, तुम दोषी हो।" दूसरे के दोषों का दिग्दर्शन इस जमाने में जितना होता है, उतना पहले नहीं होता था। किसी भी अखबार का पन्ना खोलिए, दूसरे के दोषों को बढ़ाकर, दोष न हों तो दिखाकर, रुचिपूर्वक वर्णन करते हैं। लेकिन तुलसीदासजी ने, जो धर्म की ध्वजा उठानेवाले थे, अपने को पतितों का प्रतिनिधि माना और अपना धिक्कार किया है और इसलिए वे झुक गये।

वे पतितों के प्रतिनिधि बनकर, उनके हृदय के साथ एकरूप हो गये। उन्होंने कोई काव्य नहीं लिखा। अंतर की भावना लिखी। उन्होंने कहा कि भगवान के सामने मैं अपने को दोषी पाता हूं। अंतर में थोड़ा भी दोष हो, तो उसे बड़ा करके देखने की यह वृत्ति है। सामान्य पतितों के साथ अत्यंत एकरूप हो गये। इसीलिए सारा हिंदुस्तान उनके नाम से गद्गद होता है। हिंदुस्तान में तुलसीदासजी के समान बिल्कुल आम लोगों के साथ एकरूप होनेवाला, अत्यन्त क्षमाशील, परम नम्र, अंदर से ही अपने को नीच–से–नीच माननेवाला, कोई हुआ नहीं। अलंकार के तौर पर नहीं, पर अपने को पापी समझनेवाला। रामनाम की महिमा वर्णन करते हुए कहते हैं, रामनाम से पत्थर तर गये, यह तर गया, वह तर गया। ऐसे उदाहरण अनेक दिये और आखिर में कहा –

नामु राम को कलपतरु कलि कल्यान निवासु।
जो सुमिरत भयो भाँग तें तुलसी तुलसीदासु।।
(बाल 26)

(विनोबा साहित्य : खण्ड – 9, पृष्ठ : 95–99)

राजदर्प

"उस मंदिर में देवता नहीं हैं"
साधु ने कहा।

राजा रोष से भर उठा "देवता नहीं !
अरे संन्यासी !
नास्तिक की तरह बोलता है तू
रत्नजड़ित सिंहासन पर दीपित है
रतन विग्रह,
फिर भी कहता है तू कि
खाली है यह ?"

"राजदर्प से पूर्ण है खाली नहीं,
तुमने अपने को स्थापित किया है,
देवता को नहीं।"

– रवींद्रनाथ ठाकुर

यह जो आपकी किताब है ...

कुमार प्रशांत

हमारे सुप्रीमकोर्ट में 7 सालों तक न्यायमूर्ति रह कर जस्टिस संजय किशन कौल 26 दिसंबर, 2023 को न्यायालय से विदा हुए। जस्टिस कौल 2001 में दिल्ली हाईकोर्ट में जज बने थे तथा वहीं स्थानापन्न चीफ जस्टिस भी रहे। फिर पंजाब–हरियाणा हाईकोर्ट तथा मद्रास हाईकोर्ट में चीफ जस्टिस रहे। सन् 2017 में वे सुप्रीमकोर्ट पहुंचे। वे वहां कॉलिजियम के सदस्य भी रहे तथा हमारे दौर के कई अत्यंत संवेदनशील मामलों के फैसलों में जिनमें निजता का अधिकार, समान यौन विवाह, राफल सौदा, धारा 370 आदि शामिल हैं, जस्टिस कौल की भागीदारी रही। ये सारे ही मामले ऐसे हैं कि जिनने सुप्रीम कोर्ट की गहरी परीक्षा ली है और देश को ऐसा लगा है कि सुप्रीम कोर्ट ऐसी परीक्षाओं में सफल नहीं रहा है।

इन मामलों में अदालती फैसले जिनके हित में गए उन्हें भारी राहत भी मिली और उन्होंने हमारी न्याय–व्यवस्था में गहरी आस्था भी प्रकट की। लेकिन सुप्रीमकोर्ट का अपना क्या हुआ ? जस्टिस कौल ने न्यायपालिका से मुक्ति के बाद एक अखबार को लंबा इंटरव्यू दिया है जिसके लिए हमें उनका आभारी होना चाहिए। उस इंटरव्यू से पता चलता है कि हमारी न्यायपालिका और हमारे न्यायाधीश किस बीमारी के शिकार हैं और क्यों उनकी भूमिका से देश को बार–बार निराश होना पड़ता है।

सुप्रीमकोर्ट जब दीवानी या फौजदारी मामलों में हाथ डालता है तब उसके फैसलों को जांचने की कसौटी भी और उनका परिणाम भी वक्ती होता है। जब वही सुप्रीम कोर्ट संवैधानिक मामलों की जांच करता है तब उसके फैसलों को जांचने की एक ही, मात्र एक ही कसौटी होती है। और वह कसौटी है भारतीय संविधान। श्रीमान्, हम भारत के नागरिकों ने आपको यही एक किताब पहनने–ओढ़ने–बिछाने के लिए दी है। यह जो आपकी किताब है श्रीमान्, उसे आपने कितनी शिद्दत से पढ़ा और कितनी गहराई से समझा है, इसे जांचने व समझने का भी हमारे पास एक ही हमारा जरिया है; आपके फैसले ! मैं यह भी कहना चाहता हूं कि आपके पास अपने फैसलों का संदर्भ खोजने व बनाने के लिए इस किताब से अलग दूसरी न कोई किताब है, न होनी चाहिए। यह किताब ही आपकी गीता, बाइबल या कुरान है। आपने इस किताब के अलावा क्या–क्या पढ़ा है, इसे जानने में देश को कोई खास दिलचस्पी नहीं है। जस्टिस कौल ने अपने इंटरव्यू में एक जज की हैसियत से संवैधानिक व्यवस्था के बारे में जिस तरह की बातें कहीं हैं, जिस तरह की मुश्किलों व युक्तियों का जिक्र किया है, उनसे न केवल निराश हूं मैं बल्कि गहरी शंका से भी घिरा हूं। क्या सर्वोच्च न्यायालय के स्तर पर समझ, सोच व चुनौतियों के पहचानने के संदर्भ में ऐसा धुंधलका छाया है ?

शताब्दियों तक राजनीतिक–मानसिक–सांस्कृतिक व बौद्धिक गुलामी में रहने वाला एक नवजात मुल्क जब 'नियति से एक वादा करता हुआ' अपनी आंखें खोलता है, तब हम उसके हाथ में एक किताब धर देते हैं – हमारा संविधान ! यह उन सपनों का संकलन है जो अपने लंबे स्वतंत्रता संग्राम के विभिन्न दौरों से गुजरते हुए हमारी चेतना ने देखा–समझा और अंतर्मन में बसा लिया। उन सपनों को किसी हद तक आकार व आत्मा महात्मा गांधी ने दी। हमारा यह संविधान जैसे लोकतंत्र की कल्पना करता है, उसके विकास की दिशा उसने राज्य के नीति–निर्देशक तत्त्वों में स्पष्ट दर्ज कर रखी है। सुप्रीम कोर्ट का यह सारा तामझाम और इसका पूरा बोझ देश ने इसलिए ही उठा रखा है कि यह किताब हमारे लोकतंत्र को जिस दिशा में ले जाना चाहती है, उस दिशा से कोई भटकाव या उसकी दिशा में ही कोई विपरीत परिवर्तन न कर सके। इसकी सख्त निगरानी हो। इसका सीधा मतलब है कि हमारे संविधान ने सुप्रीम कोर्ट को एक सतत व अखंड विपक्ष में रहने की भूमिका सौंपी है। ऐसा सुप्रीमकोर्ट की सबसे ऊंची कुर्सी पर बैठे जस्टिस कौल ऐसी भ्रमित अवधारणा में जीते हैं कि 'अदालत विपक्ष नहीं हो सकती है।' अदालत कभी भी विपक्षी दल नहीं हो सकती है, यह

बात तो संविधान का ककहरा जाने वाला भी समझता है लेकिन जस्टिस कौल जैसे लोग यह कैसे नहीं समझते हैं कि एक लिखित संविधान के शब्द–शब्द व शब्दों के पीछे बसने वाली उसकी आत्मा की पहरेदारी जिसे सौंपी गई है, जिसके प्रति वह सार्वजनिक तौर से बचनबद्ध हुआ है, वह सतत विपक्ष की भूमिका का स्वीकार है ? संविधान की दूसरी सारी व्यवस्थाएं अपनी भूमिका बदल सकती हैं, आज का विपक्ष कल सत्ता पक्ष बन सकता है लेकिन न्यायपालिका को हर हाल में, हर वक्त विपक्ष में ही रहना है। जस्टिस कौल जैसे लोग यह तो कह सकते हैं कि ऐसी भूमिका का निर्वहन हमसे नहीं हो सकेगा। वे ईमानदारी व हिम्मत से यह कहेंगे तो संविधान उन्हें इस भार से मुक्त हो जाने की छूट भी देता है। लेकिन सालों –साल उस जगह बैठकर, उस जगह की बुनियादी चुनौती से मुंह मोड़ना संवैधानिक अपराध है।

विधायिका में किसका कितना बड़ा बहुमत है, यह बात न्यायपालिका के लिए कैसे मतलब की हो सकती है ? वह अल्पमत की सरकार हो या दानवी बहुमत की, सुप्रीमकोर्ट के पास उसको तौलने का तराजू तो एक ही है : संविधान! उस वक्त की सरकार का हर वह फैसला सुप्रीमकोर्ट को स्वीकार होगा जो संविधान के शब्द व उसकी आत्मा के अनुरुप है; जो फैसला ऐसा नहीं है वह कितने भी बहुमत से लिया गया हो, सुप्रीमकोर्ट की नजर में वह धूल बराबर भी नहीं होना चाहिए। सुप्रीमकोर्ट को इसके लिए न कोई लड़ाई लड़नी है, न कोई नारेबाजी करनी है, न किसी की पक्षधरता करनी है। उसे बस संवैधानिक भाषा में घोषणा करनी है। क्या कोई अंपायर इसे नो बॉल कहने से हिचकेगा या डरेगा कि बॉलर बहुत 'फास्ट' है; याकि अंगुली उठाने से हिचकेगा कि बल्लेबाज कोई सचिन या डिवेलियर है ? उसकी संवैधानिक ऊंगली उठेगी ही; फिर बल्लेबाज विकेट छोड़ता है या नहीं, यह देखना व्यवस्था के दूसरे घटकों का काम है। 'ओवरपावरिंग मैजोरिटी' अथवा' इनक्रीजनिंग पोलराइज्ड पोलिटिकल इन्वायरमेंट' जैसे शब्दों से जस्टिस कौल क्या कहना चाहते हैं ? क्या वे यह कह रहे हैं कि ऐसे माहौल में सुप्रीमकोर्ट काम नहीं कर सकता है ? अगर ऐसा है तो फिर वह है ही क्यों ? सुप्रीमकोर्ट संतुलन साधने की राजनीति करने वाला संस्थान नहीं है। उसका काम तटस्थता से संविधान लागू करना है।

हमारे संविधान में एक ही संप्रभु है – भारत की जनता। बाकी जितनी भी संवैधानिक संरचनाएं हैं उनकी उम्र संविधान में तय कर दी गई है और उनमें से कोई भी संप्रभु नहीं है – न न्यायपालिका, न विधायिका, न कार्यपालिका और न प्रेस। संविधान ने इन सबको एक हद तक स्वायत्तता दी है लेकिन इन सबका परस्परावलंबन भी सुनिश्चित कर दिया है। सबकी चोटी एक–दूसरे से बंधी है। इतना ही नहीं, संवैधानिक व्यवस्था ऐसी बनी है कि एक अपने दायित्व के पालन में कमजोर पड़ा है तो दूसरा आगे बढ़ कर उसे संभालता भी है और पटरी पर लौटा भी लाता है। न्यायाधीशों की नियुक्ति में इंदिरा, कांग्रेस की मनमानी, प्रेस पर अंकुश लगाने की लगातार की कोशिशें, आपातकाल की घोषणा आदि संसद की विफलता के कुछ उदाहरण हैं, तो आपातकाल का संवैधानिक समर्थन करने में सुप्रीमकोर्ट का पतन भी हमने देखा है ; उसी दौर में हमने यह भी देखा कि भारतीय प्रेस के मन में अपनी स्वतंत्रता का कोई मान नहीं है। काहिल, सामाजिक दायित्व के बोध से शून्य व बला की भ्रष्ट कार्यपालिका को एकाधिकारशाही की धुन पर नाचते भी हमने देखा। और फिर हमने इन सबको किसी हद तक पटरी पर लौटते भी देखा है जिसमें सबने एक–दूसरे की मदद की है।

जस्टिस कौल की सोच–समझ पर इन सारे अनुभवों की कोई छाप नहीं दिखाई देती है लेकिन वे यह कहते जरूर मिलते हैं कि 'नेशनल ज्यूडिशियल एप्वाइंटमेंट कमीशन' को खारिज कर सुप्रीमकोर्ट ने गलती की। वे कहते हैं कि भारत के सर्वोच्च न्यायाधीश को निर्णायक वोट देकर, हमें इस कमीशन को काम करने का मौका देना चाहिए था। संविधान की भावना है कि न्यायाधीशों की नियुक्ति में विधायिका का कोई हस्तक्षेप न हो। इसमें से कॉलिजियम पद्धति निकली। जस्टिस कौल की चिंता यह नहीं है कि जो कॉलिजियम व्यवस्था पूरी तरह सुप्रीमकोर्ट के हाथ में है, उसे सुधारने तथा पारदर्शी बनाने की दिशा में पर्याप्त काम क्यों नहीं किया गया जबकि वे तो स्वयं ही कॉलियिम के सदस्य भी रहे हैं। तब उन्होंने इस व्यवस्था के साथ कैसा सलूक किया था ? अपने हाथ मजबूत कैसे

सनातन वह, जिसका आदि या अंत नहीं

डॉ. अवध प्रसाद

वर्तमान समय में 'सनातन' शब्द को सीमाओं में बांधा जा रहा है। वैसे तो प्रत्येक महत्वपूर्ण वाक्य एवं शब्द की व्याख्या देश–काल में बदल रही है। मनुष्य में शब्दों का अर्थ बदलने की अद्भुत शक्ति है। खैर, अभी इस बदलाव को केवल "सनातन" शब्द तक सीमित रखते हैं। विद्वानों ने नहीं, बल्कि सीमित सोच रखनेवालों ने इस शब्द का गलत अर्थों में उपयोग कर जीवन में, समाज में दूरिया पैदा करना प्रारम्भ कर दिया। वैसे तो "सनातन" सरल शब्द है जिसका आदि या अंत नहीं है। इसे सत्य सनातन भी कह सकते हैं। व्याकरण की दृष्टि से एक व्याख्या इस रूप में की गयी है – सत् और तत् = सनातन। यहां हम इस शब्द पर हो रहे विवादों में नहीं जाकर इसके शाश्वत अर्थ पर विचार करने का प्रयास करेंगे।

यदि ब्रह्माण्ड के ग्रहों की ओर देखें, पृथ्वी को भी देखें, पृथ्वी पर रह रहे सभी जीव–जन्तु (प्राणी), जंगल, पहाड़, हवा, जल, अग्नि आदि पर दृष्टि डालें और इसमें "सनातन" की खोज करें, इसके अर्थ को समझने का प्रयास करें तो संभवतः सनातन के सही अर्थ को समझ सकते हैं और इससे "सनातन" को लेकर मनुष्यों में आपसी विवाद कम हो सकते हैं, समाप्त हो सकते हैं। यहां इस बात का ध्यान रखना चाहेंगे कि "सनातन" वह है जिसका आदि या अंत नहीं है।" इस संदर्भ में हम गणना कर सकते हैं सूर्य, चन्द्रमा के शीतल प्रकाश, तारे एवं ग्रह, पृथ्वी आदि जिनके आदि या अंत की जानकारी नहीं है। अनेक वैज्ञानिकों ने पृथ्वी एवं कुछ ग्रहों का आदि (प्रारम्भ) जानने का प्रयास किया है। खासकर पृथ्वी का। लेकिन इसे एक प्रकार का अनुमान कहना उचित होगा। इनके अंत के समय का दावा नहीं कर सकते हैं।

जीवन में रोजमर्रा के उपयोग तथा प्राण (जीवन शक्ति) को कायम रखने के लिए "सनातन शक्ति" की ओर देखना होगा। पृथ्वी पर जीव के लिए सनातन क्या है ? सूर्य का प्रकाश, जो ऊर्जा देता है – अर्थात् सूर्य शक्ति / चन्द्रमा, जो शीतलता देता है। हमारे जीव के लिए अग्नि, जल, वायु, जिनमें अनेक तत्व शामिल हैं। पेड़–पौधों के माध्यम से

⇨बनें, इसकी जगह जस्टिस कौल की चिंता यह है कि सरकारों के साथ तालमेल कैसे बने।

अब चुनाव आयोग की जैसी संरचना संसद ने पारित की है, उस बारे में जस्टिस कौल क्या करेंगे ? अब तो चुनाव आयोग के चयन का काम, किसी सरकारी दफ़्तर में चपरासी नियुक्त करने जैसा बना दिया गया है। क्या ऐसा चुनाव आयोग संविधान की उस भावना का संरक्षण कर सकेगा जो कहती है कि चुनाव आयोग स्वतंत्र व स्वायत्त होना चाहिए ? संसद का यह कानून यदि सुप्रीमकोर्ट पहुंचा तो वह इसकी समीक्षा किस आधार पर करेगा ? सरतोड़ बहुमत वाली सरकार का वह फैसला है; इस आधार पर या जिस संविधान के संरक्षण का दायित्व सुप्रीमकोर्ट के पास है, उसकी भावना के आधार पर ? हम जस्टिस कौल का जवाब जानना चाहते हैं ।

सुप्रीमकोर्ट की सोच औपनिवेशिक हो और वह दायित्व लोकतंत्र के संचालन का उठाए, यह संभव है क्या? जस्टिस कौल इसी जाल में उलझे हैं; और हम जानते हैं कि वे अकेले ऐसी उलझन में नहीं हैं। पूरी न्यायपालिका मानवीय कमजोरियों से लेकर बौद्धिक निष्क्रियता तक से घिरी हुई है। संविधान के प्रति वह निरपवाद रूप से प्रतिबद्ध नहीं रही है। उसकी कई परेशानियों में एक यह भी है कि संविधान नाम की यह किताब सिर्फ उसके पास नहीं है। भारत के हर नागरिक के पास वह किताब है जिसे पढ़ने व समझने की उसकी योग्यता लगातार विकसित हो रही है। इसलिए सुप्रीमकोर्ट हर वक्त जनता के कठघरे में खड़ा मिलता है। यह जो आपकी किताब है श्रीमान, वह सवा सौ करोड़ से ज्याद भारतीय नागरिकों की थाती है। आप इसे देश के साथ मिल कर पढ़ेंगे तो ज़्यादा ठीक से समझेंगे।

जीवनी शक्ति ऑक्सीजन के रूप में मनुष्य को प्रदान करते हैं। इन सनातन शक्तियों के अपने–अपने स्थायी गुण हैं। अग्नि का गुण जलना है, उसका संयमित उपयोग नहीं करने पर उसमें जलाने की शक्ति है। सदुपयोग करें तो भोजन पकाने के साथ–साथ अनगिनत प्रकार से ऊर्जा के रूप में उपयोग है। "जल ही जीवन है।" – यह शाश्वत सत्य है। जीव–जगत (मनुष्य, पशु–पक्षी, पेड़–पौधे आदि) के आदि एवं अंत तो हम सहज में देखते हैं, इसमें किसी प्रकार की शंका नहीं है। पहाड़ के कई प्रकार हैं, पत्थर, खनिज आदि का भी आदि और अंत देर–सबेर हो ही जाता है। इसका अनुमान लगाया जा सकता है। केवल सनातन शब्द के अर्थ की व्याख्या संप्रदाय एवं धर्म के रूप में प्रचलन से विवाद बढ़ा है – बढ़ रहा है।

जिसे हम धर्म कहते हैं वह तो सनातन हो सकता है। क्योंकि धर्म सही अर्थ में जीवन को समभाव से जीने की व्यवस्था है सच्ची सोच है। कोई भी प्राणी, जिसमें जीवन शक्ति है, उसकी जीवनी शक्ति कायम रखने के लिए, उसके शरीर में तय सनातन क्रियायें चलती हैं। वह सभी में समान है। किसी गाय के शरीर में जीवनी शक्ति कायम रखने की जो शक्तिदायनी–जीवनदायनी प्रक्रिया है, वह सभी गायों में है। इसी प्रकार अन्य प्राणियों में भी जीवनी शक्ति का संचार सतत चलता रहता है, तभी वह जीवित है, उसमें प्राण है। इसी प्रकार मनुष्य में जीवनी शक्ति का जिस प्रकार का संचार होता है वह सभी मनुष्यों में समान है। सभी मनुष्यों में वायु (ऑक्सीजन के रूप में) श्वासतंत्र को संचालित करता है। सभी समान रूप से जल का उपयोग करते हैं, अग्नि का उपयोग विभिन्न रूप से करते हैं। सभी प्राकृतिक रूप से सूर्य की गर्मी से शरीर को शक्तिशाली बनाते हैं। ये सभी सनातन हैं। जिनके कारण हमारा (मनुष्य एवं अन्य प्राणियों का) जीवन चलता है। इसमें किसी प्रकार का भेदभाव नहीं है। यह तो सबके लिए सनातन है, इसका आदि या अंत नहीं है। वास्तविकता यह है कि समाज के सभी मनुष्य समान हैं। उसे चलानेवाली शक्ति, जो कि सनातन है, उसके रुक जाने से सभी प्रकार के जीव, जिसमें मनुष्य भी शामिल है, उसके प्राण तत्व का अंत हो जाता है। सरल शब्दों में कहें तो मां के गर्भ से प्राण तत्व का प्रारम्भ होना जीवन का आदि (प्रारम्भ) है और प्राण तत्व का संचार रुक जाने पर जीव का अंत है। जीव (प्राण तत्व) का यही आदि और अंत है। इसमें सम्प्रदाय, जाति या अन्य प्रकार का भेदभाव कहां आता है ? वह तो सभी प्राणियों के लिए समान है, सनातन है।

एक बात का और ध्यान रखने से स्थिति साफ एवं सरल हो जाती है। मनुष्य में रक्त (खून) का प्रकार समान होता है, उसमें जाति, धर्म, सम्प्रदाय या संगठन में किसी प्रकार का भेद नहीं है। ईसाई या मुस्लिम धर्म को मानने वाले, यहूदी पंथ को खून देने से किस भी प्रकार का व्यवधान नहीं है। हिन्दुस्तान में भी रहनेवालों की यही स्थिति है।

अंग्रेजी साम्राज्य में आवश्यकता पड़ने पर ब्रिटिश नागरिक भी भारतीय नागरिक का खून लेने पर परहेज कहां करते थे। आज लाखों नागरिक विदेशों में रहते हैं। वहां जाकर बस गये हैं। वे वहां के लोगों का खून (अवश्यकता पड़ने पर) चढ़ाने में परहेज नहीं करते हैं। इस वैश्विक स्थिति में जाति, धर्म, सम्प्रदाय का भेद मनुष्य की नासमझी की पराकाष्ठा है। इसे हम वैश्विक स्तर पर भी देख सकते हैं। मनुष्य द्वारा विकसित की गयी समाज व्यवस्था को हम प्रकृति द्वारा निर्मित "सनातन" के आदि और अंत के सत्य को अंत (समाप्ति) की ओर ले जा रहे हैं।

श्रद्धांजलि

रम्मू दीदी का देहांत

ब्रह्मविद्या मंदिर, पवनार की साधिका **रम्मू दीदी** (रमा अग्रवाल) का **दिनांक 8 जनवरी, 2024** को देहांत हो गया। वे कुछ दिनों से अस्वस्थ चल रही थीं।

रम्मू दीदी 8 जनवरी, 2024 की सुबह 4.30 की प्रार्थना में शामिल हुईं और उसके बाद उन्होंने अंतिम सांस ली। वे वर्षों तक बाबा विनोबा के सानिध्य में रहीं व ब्रह्मविद्या मंदिर की वरिष्ठ सदस्या थीं।

उनका जाना गांधी–विनोबा विचार–परिवार के लिए एक अपूरणीय क्षति है।

गांधी स्मारक निधि परिवार की ओर से रम्मू दीदी के प्रति हार्दिक श्रद्धांजलि! ईश्वर उनकी आत्मा को चिर शांति प्रदान करे। – सं.

हमारा मन और अकेलेपन की त्रासदी

अनिल त्रिवेदी

आठ अरब जनसंख्या वाली इस विशाल दुनिया में कोई भी मनुष्य अकेला क्यों महसूस करने लगता है ? इतनी बड़ी दुनिया में जहां हर कहीं लोग ही लोग दिखाई देते हैं। वहां किसी मनुष्य को क्यों यह लगने लगता है कि वह इस दुनिया में निपट अकेला है। उसकी बातों को कोई सुनने–समझने वाला इस दुनिया में है ही नहीं या इसके उलट बार–बार यह विचार मन में आता है कि सबको अपनी–अपनी पड़ी है, किसी को मेरे से बात करने की फुरसत ही नहीं है।

एक और बात इस कालखड में हमारे मुंह से बार–बार निकलने लगी है कि कोई किसी का नहीं है। हम तो मदद करना चाहते हैं पर कोई मदद लेना ही नहीं चाहता। यह केवल व्यक्ति के स्तर पर भी नहीं है, सार्वजनिक जीवन की तमाम संस्थाओं, राजनैतिक दलों सहित सरकारी विभागों और देश–दुनिया के स्वयंभूकर्ता–धर्ता से लेकर दुनिया को रास्ता दिखाने वाले सामाजिक कार्यकर्ता, राजनेता के साथ–साथ आध्यात्मिक गुरु, धार्मिक साधु–संतों के अन्तर्मन में भी यही सब चल रहा है।

कोई इसे कहे–न–कहे पर आज की दुनिया में नवजात शिशुओं को छोड़ बाकी सबके मन में लगभग ऐसी ही पीड़ा है। देश और दुनिया को निरन्तर प्रेरणा देने के लिए जीवन भर भ्रमण करने वाले प्रवचनकारों से बात कर देखिए, एक दम बोल पड़ेंगे कि हमने सारा जीवन लगा दिया पर कोई सुनता–समझता ही नहीं है। लेखक, संगीतज्ञ, चित्रकार जैसी रचनात्मक वृत्ति में लगी विभूतियों से लेकर दुनिया भर की सभी विधाओं के हुनरमंद या सामान्यजन के अन्तर्मन में यही सब चलता रहता है।

व्यापारी को लगता है व्यापार मंदा चल रहा है, किसान को लगता है फसल कमजोर है या भाव नहीं है। शिक्षक को लगता है छात्रों का पढ़ने में मन नहीं है। छात्रों को लगता है शिक्षक पढ़ाना नहीं चाहते। सरकार को लगता है कर्मचारी काम नहीं करते, कर्मचारियों को सरकारी फरमान बोझ लगते हैं। ये हमारे काल–खंड के मनुष्य के मन में जो कुछ भी चल रहा है या चलता रहता है उसा एक अंश है।

बुनियादी सवाल यह है कि हम सब, अपने आप पर और दुनिया में हमारे समकालीन मनुष्यों पर विश्वास क्यों नहीं कर पा रहे हैं ? क्या हमारे मन में खुद अपने आप पर भी विश्वास है ? क्या हम अपने से भिन्न मनुष्य को भी अपने जैसा ही मान पाते हैं ? ये सब कुछ सामान्य बात है। जो दुनिया के प्रत्येक मनुष्य के मन में आते–जाते या बने ही रहते हैं। इसमें अनूठा कुछ भी नहीं है, यह सनातन समय से मन की अवस्था है।

यदि मनुष्य को मनुष्य होने पर भी सुख, शांति और समाधान नहीं है तो आज के कालखंड में जीवित मनुष्य क्या करे कि उसे अपने मन, जीवन और कृतित्व में समाधान और शांत–चित्तता का बोध हो। जैसे–जैसे हमारा जीवन दुनिया में अपने समकालीन मनुष्यों के सानिध्य में आता है। वैसे–वैसे हमारे मन में हर मामले में मेरे–तेरे का भाव दिन–दूना, रात–चौगुना बढ़ता ही जाता है। मैंने इतनी मुश्किल से यह कार्य किया और उसने उसे देखकर कोई भी प्रतिक्रिया नहीं दी और प्रारंभ हो गया तुलनात्मक चिन्तन और गिलों–शिकवों की अंतहीन यात्रा का सिलसिला जो आजीवन रुकने का नाम ही नहीं लेता।

आज की आधुनिक और पहले की पुरातन दुनिया में जन्मे मनुष्य की भी यही मनोदशा दिखाई देती है। इस दुनिया के मनुष्य के मन में न तो खुद पर भरोसा है और न ही दुनिया के अन्य मनुष्यों पर भरोसा करने का सरलतम रास्ता मनुष्य के मन ने पकड़ा है। नतीजा आज यह हो गया है कि सब एक–दूसरे से आशंकित हो जीवन जी रहे हैं। जीवन धरती पर अभिव्यक्त हुआ, पर जीवन जीने का ढंग पुरातन काल से मनुष्यों ने दुनिया भर में अपने–अपने ढंग से विकसित किया। मनुष्य को अपने द्वारा बनाए गए जीवन के ढंग से कभी भी समाधान नहीं मिला और मनुष्य ने अपने अनुभव, चिन्तन, मनन और जरूरतों को देख–परखकर निरन्तर अपने जीवन काल में अनगिनत प्रयोग किए जिन्हें बड़े उत्साह से अपनाया और जल्द ही स्वयं भुला भी दिया।➪

लोकतंत्र के राम की 'प्राण प्रतिष्ठा'

श्रवण गर्ग

पंद्रह राज्य 110 जिले, 6,713 किलो मीटर लंबा रास्ता और 66 दिनों का सड़कों पर सफ़र। जनता के बीच, जनता के लिए। 'लोकतंत्र के राम' की देश की 140 करोड़ जनता के हृदयों में प्राण प्रतिष्ठा के लिए। एक लगातार चलने वाली यात्रा। लोगों की आंखों में आंखें डालकर उनके आंसुओं में खुशी और ग़मों की तलाश करने का यज्ञ। जनता से उसकी ही जुबान में ही बातचीत करने की कोशिश। कोई छोटा–मोटा काम नहीं हो सकता। यह यात्रा उस चार हज़ार किलो मीटर के साहस से भिन्न है जिसे कन्याकुमारी से कश्मीर तक पैदल नापा गया था और जिसने देश भर में उम्मीदें जगा दी थीं कि चीजें और सत्ताएं बदली जा सकती हैं। जरूरत सिर्फ़ एक ईमानदार संकल्प की है।

वक्त के मान से पहली 'भारत जोड़ो यात्रा' ज्यादा लंबी थी पर इसलिए छोटी थी कि नदियों, पहाड़ों, जंगलों और निर्जन स्थलों से गुज़रते वक्त भी लोगों का एक बड़ा समूह हरदम साथ चलता था। वह यात्रा 150 दिनों की थी। यह सिर्फ 65 दिनों की है। ... इस यात्रा में सुनसान रास्तों से गुज़रते वक्त बस में कुछेक सहयोगी और केवल एक यात्री ही रहने वाला है। बस की खिड़की से बाहर बसे भारत को चुपचाप निहारता हुआ।

हजारों किलो मीटर की इस अद्‌भुत और ऐतिहासिक यात्रा के दौरान कभी एक क्षण ऐसा भी आ सकता है जब राहुल गांधी स्वयं से सवाल करने लगें कि भारत की जिस तस्वीर को वे बदलना चाह रहे हैं वह अगर 2024 के चुनावों के बाद भी नहीं बदली तो वे क्या करने वाले हैं ? क्या देश का धैर्य उनका लंबे वक्त तक साथ देने के लिए तैयार होगा ? अगर चीजें नहीं बदलीं तो क्या उन्हें इसी तरह की या और ज़्यादा कठिन कई नई यात्राएं करना पड़ेंगी ? उन यात्राओं की तब दिशा क्या होगी ? सहयात्री कौन बनेंगे ? क्या देश को तब तक ऐसी स्थिति में बचने दिया जाएगा कि उनके जैसा कोई व्यक्ति जनता को जगाने वाली किसी भी यात्रा के लिए सड़कों पर निकल सके ?

राहुल गांधी की पहली 'भारत जोड़ो यात्रा' के समय जो भय व्यक्त किया गया था वह आज भी क़ायम है। उसमें कोई कमी नहीं हुई है। मैंने तब लिखा था कि : 'यात्रा को विफल करने और नकारने के लिए तमाम तरह की ताक़तें आपस में जुट गई हैं, संगठित हो गई हैं। राहुल के पैदल चलने की थकान ये ताक़तें अपने पैरों में महसूस कर रही हैं। यात्रा की सफ़लतापूर्वक समाप्ति के लिए इसलिए प्रार्थनाएं की जानी चाहिए कि किसी भी देश के जीवन में इस तरह के क्षण बार–बार उपस्थित नहीं होते।' राहुल की पहली यात्रा निर्विघ्न समाप्त हो गई थी। इस समय सवाल यह है कि क्या इस दूसरी यात्रा को बिना किसी बाधा के पूरा होने दिया जाएगा ? राहुल को गुवाहाटी से मिल रही धमकियां किस ओर इशारा कर रही हैं ?

आश्चर्य नहीं होता कि देश के भीतर व्याप्त व्यापक नागरिक उत्पीड़न और सीमाओं पर उपस्थित अशांत माहौल के बीच भी वे तमाम लोग, जिनका सत्ता पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष नियंत्रण है, अपनी राजनीतिक सुरक्षा और व्यावसायिक संपन्नता के प्रति पूरी तरह से निश्चिंत और आश्वस्त हैं ? इसके पीछे कोई तो कारण अवश्य होना चाहिए जो देश की जानकारी में नहीं है और जनता को उसके प्रति चिंता भी व्यक्त करनी चाहिए। राहुल गांधी शायद उस अज्ञात कारण को जानते हैं। इस

➪ दुनिया की व्यापकता और मनुष्य की व्यक्तिगत पसंद–नापसंद आधारित मन और सोच–समझ की सिकुड़न ने इतनी बड़ी दुनिया में अकेलेपन के भाव को मनुष्य के मन में गहरे से स्थापित कर दिया है। मन शरीर में होकर भी समूची दुनिया से परे है, पर मनुष्य मन के अंतहीन प्रवाह में अपना संतुलन कायम नहीं रख पाता। मनुष्य को भीड़ में भी अकेला और अकेले में भी आनन्द से रहना सीखने की कला का अपने समूचे जीवन में आत्मसात कर आजीवन जन्दादिली के साथ जीना सीखते रहना चाहिए। जीवन प्राकृतिक अभिव्यक्ति है, पर जीना मनुष्य के मन का खेल है। इसीलिए अकेले ही भीड़ में रहते हुए भी आनन्द से जीने का संतुलन बनाना आवश्यक है। इसके बिना न तो हम अकेले रह सकते हैं और न ही समकालीन मनुष्य समाज के साथ रह सकते हैं। (सप्रेस)

यात्रा को उसी तरह का परिणाम माना जाना चाहिए?

संदेह होता है कि मर्यादा पुरुषोत्तम राम की प्रतिमा के प्राण प्रतिष्ठा समारोह को योजनाबद्ध तरीके से एक राष्ट्रीय उत्सव में इसीलिए तो नहीं तब्दील किया जा रहा है कि राहुल गांधी की यात्रा से उत्पन्न होने वाला नागरिक उत्साह उसके प्रचारात्मक शोर–शराबे में गुम हो जाए ? सारे मणिपुर और कश्मीर लोकसभा चुनावों तक चलने वाले राष्ट्रव्यापी समारोहों की राजनीतिक गूंज में सफलतापूर्वक दफ़न कर दिए जाएं ? क्या ऐसा कर पाना संभव हो पाएगा ?

विश्व–इतिहास में शायद पहली बार अनोखा प्रयोग हो रहा है कि एक तरफ़ तो अकेला इंसान जनता को न्याय दिलाने की आकांक्षा और संकल्प के साथ सड़कों पर निकला हुआ है और दूसरी ओर दुनिया के सबसे बड़े प्रजातांत्रिक मुल्क की हुकूमत ने अपनी समूची सामर्थ्य को सिर्फ़ इस काम में झोंक दिया है कि जनता को धर्म के नशे में इतना लीन कर दिया जाए कि वह यात्रा को देखने के लिए भी आंखें नहीं खोल पाए।

राहुल गांधी की महत्वाकांक्षी यात्रा जनता को अपने पैरों पर खड़े करने की कोशिशों की दिशा में एक लंबे समय तक के लिए अखीरी प्रयास मानी जा सकती है। कहा नहीं जा सकता कि देश के जीवन में इस तरह का क्षण आगे कब उपस्थित होगा। मणिपुर से प्रारंभ हुई यात्रा की लोकसभा चुनावों के ठीक पहले मुंबई में समाप्ति के साथ राहुल गांधी का काम पूरा हो जाएगा। अपनी दो यात्राओं (दक्षिण में कन्याकुमारी से उत्तर में कश्मीर और पूर्व में मणिपुर से पश्चिम में मुंबई) के ज़रिए वे देश को अपना सब कुछ दे चुके होंगे।

सवाल यह है कि क्या देश की जनता ने सोचना प्रारंभ कर दिया है कि राहुल गांधी उसके लिए क्या कर रहे हैं? क्यों चल रहे हैं? यात्रा का मक़सद क्या है? यात्रा के क्या परिणाम निकलने वाले हैं? यात्रा की सफलता–असफलता में भारत का भविष्य कैसे छुपा हुआ है ? अभी सोचा नहीं गया होगा कि राहुल गांधी अगर चलना बंद कर दें तो दूसरा कौन है जो चलने वाला है ? इतने बड़े देश में या कोई और नज़र आता है जो भविष्य की किसी भारत जोड़ो यात्रा के लिए राहुल के हाथ से लेकर मशाल अपने हाथों में थाम लेगा ? राहुल की यात्रा की सफलता के लिए की जा रही प्रार्थनाओं के स्वर सत्ता–प्राप्ति के मंगलाचरणों में नहीं डूबने दिए जाने चाहिए। ●

मंत्री की कलम से

गांधी स्मारक निधि की 75वीं वर्षगांठ :

गांधी स्मारक निधि की 75वीं वर्षगांठ पर गांधी स्मारक निधि पंजाब, हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेश द्वारा रचनात्मक गतिविधियां हिमाचल प्रदेश में भी आरंभ हो रही हैं।

शिमला, सोलन और मंडी जिले के सात ग्राम पंचायतों के लगभग 40 गांवों और 25 स्कूलों के लगभग 500 बच्चे महात्मा गांधी सामुदायिक केंद्र से जुड़े हैं। ग्रामीण परिवेश में शहरों के मुकाबले गांव के बच्चों को पढ़ने–लिखने व सीखने के लिए पर्याप्त सुविधा और प्रेरणा नहीं मिलती है। इन सामुदायिक केंद्रों में पुस्तकालय बच्चों को पढ़ाई से जोड़ने का अवसर प्रदान करते हैं, बच्चों के साथ किए जाने वाले कार्य जिसमें रीडिंग एंड राइटिंग, फेस्टिवल, सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता, ड्राइंग कंपटीशन, साइंस फेयर व समय–समय पर होने वाले सांस्कृतिक कार्यक्रम उन्हें सीखने और आगे बढ़ने का अवसर प्रदान करते हैं। गांव के बच्चे मंच पर जाने से हिचकिचाते हैं। उन्हें समूह में कार्य करने का अवसर मिलता है जिससे उनका आत्मविश्वास बढ़ता है।

यहां 3 से 14 वर्ष की आयु के बच्चे आते हैं जो आठवीं कक्षा तक के होते हैं। इन्हीं पर अधिक फोकस किया जाता है। छोटे बच्चों को बड़े बच्चों के साथ सीखने का अवसर मिलता है और बड़े बच्चे एक–दूसरे से चर्चा कर पाते हैं। पुस्तकालय में बच्चों की भाषा, ज्ञान व उच्चारण पर ध्यान दिया जाता है। बच्चों को अपने विचार प्रकट करने व दूसरे बच्चों के मनोभाव सुनने का अवसर भी मिलता है। बच्चों को स्वयं की कहानी, कविताएं लिखने के लिए प्रेरित किया जाता है। महीने में तीन दिन इन केंद्रों में यह गतिविधि चलती है जिससे बच्चों में पढ़ने–लिखने व सीखने का मन बनता है। गांधीजी के विचारों, उनकी जीवनी भी अध्ययन में शामिल की गयी है।

वॉलंटियर्स द्वारा गांव में बच्चों के घरों में विज़िट किया जाता है और बच्चों को घर पर अपनी होम लाइब्रेरी बनाने के लिए प्रेरित किया जाता है। अभिभावकों से बच्चों की सहायता करने के विषय में चर्चा की जाती है। इससे

बच्चों के पढ़ने के लिए माहौल बनता है और वे पढ़ने के लिए प्रेरित होते हैं। इससे बच्चे अपने सिलेबस से हटकर पढ़ने व सीखने की कोशिश करते हैं। बच्चों में रचनात्मकता उत्पन्न होती है और उनमें विषय को केवल रटने की प्रवृत्ति कम होती है। सामुदायिक केंद्र के पुस्तकालय से बच्चों को पुस्तकें भी उपलब्ध करायी जाती हैं।

देश के आजाद होने के बाद संयुक्त पंजाब प्रांत में गांधी स्मारक निधि का काफी कार्य था जिसमें इसका पर्वतीय क्षेत्र हिमाचल प्रदेश भी शामिल था। गांधीजी वर्ष 1921 से 1946 के मध्य 10 बार हिमाचल प्रदेश आए। उन्होंने शिमला के ईदगाह मैदान, रिज व अन्य स्थानों पर मीटिंग व प्रार्थना सभाएं कीं। आर्य समाज मंदिर गए। महिलाओं को स्वदेशी अपनाने के लिए प्रेरित किया। वहां के लोगों ने उन्हें तिलक स्वराज फंड के लिए सोना और नकदी दान में दी। इन कार्यक्रमों का लक्ष्य है बच्चों में शारीरिक, वैचारिक और नैतिक विकास करना, मस्तिष्क और शरीर का विकास साथ–साथ हो, साथ ही आत्मा की जागृति भी। इस तालीम प्रक्रिया में अधिकतर बच्चे किसान और हाथ से काम करने वाले परिवार से ही आते हैं।

गांधी स्मारक निधि, पट्टीकल्याणा, पानीपत की टीम अशोक शरण के संयोजन में सुनीता शर्मा, गिरिराज के साथ हिमाचल प्रदेश की इन गतिविधियों को गति देने का काम कर रही हैं और स्थानीय स्तर पर पुष्पा शर्मा के नेतृत्व में बाकी वॉलंटियर्स देवकाला, पूनम, निशा बाला, कल्पना शर्मा, प्रेमा लक्ष्मी सभी चिंहित गांवों में काम कर रही हैं।

भोपाल :

गांधी भवन न्यास, भोपाल की बैठक में ओरछा (मध्य प्रदेश) में दो दिवसीय गांधीजन सम्मेलन 11 व 12 फरवरी को आयोजन करने का निर्णय हुआ। कार्यक्रम म. प्र. गांधी स्मारक निधि, म. प्र. सर्वोदय मंडल के सहयोग से सम्पन्न होगा। प्रतिवर्ष म. प्र. गांधी स्मारक निधि द्वारा यहां गांधीजी के श्राद्ध दिवस 12 फरवरी पर विशेष कार्यक्रम आयोजित किया जाता है। इस वर्ष 12 फरवरी को सर्वधर्म प्रार्थना सभा, संगोष्ठी के साथ बुंदेलखण्ड के वरिष्ठ सर्वोदय कार्यकर्ता स्वर्गीय लोकेन्द्र भाई की स्मृति में आजीवन समाज की सेवा में समर्पित डॉ. भारतेन्दु प्रकाश

> जब मैं निराश होता हूं, मैं याद कर लेता हूं कि समस्त इतिहास के दौरान सत्य और प्रेम के मार्ग की ही हमेशा विजय होती है। कितने ही तानाशाह और हत्यारे हुए हैं, और कुछ समय के लिए वे अजेय लग सकते हैं, लेकिन अंत में उनका पतन हुआ है। — महात्मा गांधी

को 'लोकेन्द्र भाई स्मृति सम्मान' प्रदान किया जायेगा। डॉ. भारतेन्दु प्रकाश पर्यावरण वैज्ञानिक होने के साथ पर्यावरण पर अनेक शोध एव पुस्तक लिख चुके हैं। वर्तमान में डॉ. प्रकाश म. प्र. गांधी स्मारक निधि के सदस्य भी हैं।

विजयवाड़ा (आन्ध्र प्रदेश) :

गांधी स्मारक निधि की 75वीं वर्षगांठ पर विजयवाड़ा पुस्तक मेला में 28 दिसंबर से 7 जनवरी तक गांधी चित्र प्रदर्शनी और पुस्तक के स्टाल लगाये गये थे। स्टाल का उद्घाटन आन्ध्र प्रदेश विधानसभा के पूर्व डेपूटी स्पीकर मंडली प्रसाद बुद्ध ने की। तेलुगू भाषा में गांधी साहित्य की प्रदर्शनी और बिक्री भी हुई। प्रतिदिन स्टाल में अलग–अलग विद्यालय, महाविद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा विभिन्न कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये गये। इस अवसर पर सीबीआई के पूर्व संयुक्त निदेशक लक्ष्मी नारायण, आन्ध्र प्रदेश हाई कोर्ट के पूर्व मुख्य न्यायाधीश शंकर राव, तेलुगू फिल्म अभिनेता और लेखक तनिकेला भरणी, पूर्व इलेक्शन कमिश्नर आंध्र प्रदेश निम्मगड्डा रमेश कुमार जैसे व्यक्तित्वों ने विद्यार्थियों में उत्साहवर्धन किया। इस अवसर पर विभिन्न चरखा की प्रदर्शनी के साथ चरखा चलाने का प्रशिक्षण भी दिया गया। लगभग 1 लाख लोगों ने स्टाल को देखा। कार्यक्रम का आयोजन आन्ध्र प्रदेश गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष डॉ. पी.सी. गांधी की प्रेरणा से हुई। इसमें सदस्य रवि शारदा, रामचन्द्र राव, रवितेजा की अहम भूमिका रही।

30 जनवरी गांधी स्मारक निधि की 75वी वर्षगांठ के उपलक्ष्य में विशेष गांधी स्मारक व्याख्यान का आयोजन विजयवाड़ा में किया गया, जिसमें मुख्य वक्ता रहे डॉ. जयप्रकाश नारायण, संस्थापक फाउण्डेशन फॉर डामोक्रेटिक रिफार्म, कार्यक्रम की अध्यक्षता पी. सी. गांधी ने की। इसके अलावा डॉ. एन. भास्कर राव, अध्यक्ष, सी. एम. एस. नई दिल्ली भी उपस्थित रहे। – ***संजय सिंह***

प्रकाशन तिथि 28/01/20243
Delhi Postal Regd. No. DL (C)-05/1423/2022-2024
R.No.21841/1971 Posted at L.P.C.- Delhi. R.M.S.Delhi-6 on 1st, 2nd February, 2024

हे राम! श्री राम!!

सुजाता चौधरी

हे राम
हे अखिल विश्वात्मा
हे कण–कण में व्याप्त प्रभु!
तुम्हारा नाम लेते लेते
राम राम रटते रटते
न जाने कितने तर गए।
पर क्या अब सब कुछ बदल रहा है ?
सुना है अब तुम राम नहीं रहे,
श्री राम हो गए हो।
दीन दुखियों के करुणामय नहीं रहे,
गरीबों की कुटिया के सरताज नहीं रहे।

भव्य प्रसादों में तुम्हारी प्राण प्रतिष्ठा हो रही है,
राजा–महाराजाओं की तरह
अब तुम सिर्फ महलों में रहोगे,
दागीनों से सजोगे ?
शासन्तंत्र की कुटिल चालों की
साजिश के शिकार बन जाओगे ?

अब तुम ही बताओ
शबरी के बेर कैसे खा पाओगे ?
सुग्रीव से मैत्री कैसे कर पाओगे?
भला हनुमान से ही किस विधि मिल पाओगे ?
ऐसे में तो तुम
अखिल ब्रह्मांड के नायक भी नहीं रह पाओगे।

सुना है अब
पूरी सृष्टि की बात तो छोड़ दें,
तुम समस्त मानव जाति के भी नहीं रहे।
जब तुम हे राम थे,
ईश्वर, अल्लाह सभी तुम्हीं थे,
खुदा भी तुम्हीं थे,
शिव भी तुम्हीं थे,
गॉड भी तुम्हीं थे,
पर शायद अब सब कुछ बदल रहा है,
अब तुम श्री राम बनकर
अपने ही घर में रहने के नाम पर
कहीं कैदी तो नहीं बनाए जा रहे ?

कहीं अध्योध्या
सोने की लंका तो नहीं बन रही ?
तुम्हें प्रतिष्ठित करने के बहाने
दशानन् के अहंकार की स्थापना
तो नहीं हो रही ?

हे राम!
क्षमा करना
मैं दिग्भ्रमित तो नहीं हो रही ?
ऐसा कुछ नहीं होगा
तुम ब्रह्मांड नायक हो
तुम तुलसी के राम हो
तुम कबीर के राम हो
तुम गांधी के राम हो
और भी न जाने कितने मजलूमों के राम हो।

हे कण–कण में व्याप्त राम,
तुम ही प्रेम हो
तुम ही मैत्री हो
तुम ही अनुकंपा हो।

ऐसा कुछ नहीं होगा,
यह सब धूल भरी आंधी है,
पानी के बुलबले हैं,
कुछ क्षण के फरमान हैं,
प्रेम में सब कुछ निर्मल हो जाएगा
तभी तो तुलसी बाबा ने लिखा
'राम ही केवल प्रेम पियारा'!

'संस्थाकुल' हिन्दी मासिक

फार्म–4 (रूल 8)

प्रकाशन का स्थान	:	राजघाट, नई दिल्ली–110002
प्रकाशन की अवधि	:	मासिक
मुद्रक का नाम	:	संजय सिंह
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	गांधी स्मारक निधि, राजघाट, नई दिल्ली–110002
सम्पादक का नाम	:	रामचन्द्र राही
पता	:	गांधी स्मारक निधि, राजघाट, नई दिल्ली–110002
स्वामित्व	:	गांधी स्मारक निधि, राजघाट, नई दिल्ली–110002

मैं संजय सिंह यह घोषणा करता हूं कि मेरे द्वारा ऊपर दिये गए तथ्य मेरी जानकारी के अनुसार सत्य हैं।

हस्ताक्षर
संजय सिंह
प्रकाशक

स्वामी गांधी स्मारक निधि के लिए राजघाट, नई दिल्ली–110002 से संजय सिंह, गांधी स्मारक निधि द्वारा प्रकाशित व मुद्रित जैन ऑफसेट प्रिंटर्स, 198/2–1, फारचुन टावर, रमेश मार्केट, नई दिल्ली–110065
सम्पादक – रामचन्द्र राही